हिन्दी पत्रकारिता

राष्ट्रीयता एवं संस्कृति

सम्पादक
डॉ. राज कुमार पाण्डेय

हिन्दी पत्रकारिता : राष्ट्रीयता एवं संस्कृति
Hindi Patrakarita : Rashtriyata evam Sanskriti

Edited by: *Dr Raj Kumar Pandey*

© डॉ. राज कुमार पाण्डेय

ISBN : 978-93-91602-22-2

प्रकाशक

साहित्य संचय

बी-1050, गली नं. 14, पहला पुस्ता,
सोनिया विहार, दिल्ली-110090
फोन नं. : 09871418244, 09136175560
ई-मेल - sahityasanchay@gmail.com
वेबसाइट - www.sahityasanchay.com

ब्रांच ऑफिस

ग्राम : बहुरार, पोस्ट : ददरी
थाना : नानपुर, जिला : सीतामढ़ी
पटना (बिहार)

नेपाल ऑफिस

राम निकुंज, पुतलीसड़क
काठमांडौ, नेपाल-44600
फोन नं. : 00977 9841205824

प्रथम संस्करण : 2021

कवर डिजाइन : प्रदीप कुमार

मूल्य : ₹ 700 (भारत, नेपाल)
मूल्य : $ 20 (अन्य देश)

मुद्रक : श्रीबालाजी ऑफसेट, ई-15, सेक्टर-ए 5/6ए ट्रोनिका सीटी, गाजियाबाद, उ.प्र.

13. स्वतंत्रता आंदोलन और महात्मा गांधी की पत्रकारिता 11
डॉ. सीमा चन्द्रन
14. हिंदी पत्रकारिता का क्रांतिकारी स्वरूप : 'चाँद' 26
डॉ. कंचन शर्मा
15. बालमुकुंद गुप्त की पत्रकारिता : राष्ट्रीयता एवं संस्कृति 27
डॉ. राजल गुप्ता
16. शिवपूजन सहाय की पत्रकारिता और मतवाला-मंडल 28
(विशेष सन्दर्भ : हिंदी नवजागरण)
डॉ. राजीव रंजन प्रसाद
17. गणेश शंकर विद्यार्थी की पत्रकारिता में राष्ट्रीयता का शंखनाद 29
डॉ. राज कुमार पाण्डेय
18. हिंदी पत्रकारिता में भारतीय संस्कृति 30
डॉ. सरिता शुक्ला
19. भूमंडलीकरण : बदलती भारतीय संस्कृति और हिंदी मीडिया 31
डॉ. लक्ष्मी देवी
20. स्वतन्त्रता आन्दोलन में हिंदी पत्रकारिता की भूमिका 32
डॉ. निशा सेंगर
21. भारतेंदु युगीन पत्रकारिता और राष्ट्रीय चेतना 33
सतीश कुमार भारद्वाज
22. राष्ट्रीयता और संस्कृति के प्रसार में हिंदी दैनिक 34
'दस्तक प्रभात' का योगदान
अजय कुमार
23. स्वतंत्रता आंदोलन में हिंदी पत्रकारिता की भूमिका
विश्वम्भर प्रसाद मिश्र
24. भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के प्रचार- प्रसार में कल्याण के विशेषांकों की भूमिका(हनुमान प्रसाद पोद्दार के विशेष संदर्भ में)
अनीता देवी
25. भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की प्रचारक पत्रिका : कल्याण
(हिन्दू-संस्कृति-परिशिष्टांक विशेष)
शिल्पी मिश्रा

शिवपूजन सहाय की पत्रकारिता और मतवाला-मंडल
(विशेष सन्दर्भ : हिंदी नवजागरण)

डॉ. राजीव रंजन प्रसाद
सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
राजीव गांधी विश्वविद्यालय, रोनो हिल्स
दोईमुख, अरुणाचल प्रदेश

अपनी तरह का अनूठा आँचलिक उपन्यास है 'देहाती दुनिया' जिसे लिखने वाले शिवपूजन सहाय साहित्य के लाल बहादुर शास्त्री कहे जाते हैं। आचार्य शिवपूजन सहाय आधुनिक पत्रकारिता के उन्नायक-पुरुष के रूप में समादृत हैं जिनके सरल-सादगीपूर्ण व्यक्तित्व में बहुत कुछ ऐसा देखने को मिल जाता है जिसने आने वाली पीढ़ी को पत्रकारीय तेवर एवं लेखन में चेतस बनाया; उन्हें सम्पादन-कला में दक्ष-निपुण किया था। शिवपूजन सहाय 'मतवाला-मंडल' के गुणी सम्पादकों में से एक हैं। हिंदी पत्रकारिता में शिवपूजन सहाय कई अर्थों में स्तुत्य हैं। पहली बात तो यही कि वह आज के अधिसंख्य पत्रकारों की तरह बगैर गेट के नहीं थे जिनके पास न तो भाषा है और न उसे सम्यक् ढंग से बरतने की तमीज मालूम है। इतिहास-बोध और सांस्कृतिक-साहित्यिक विवेक-बुद्धि से च्युत ऐसे पत्रकारों ने भारतीय पत्रकारिता का बेड़ा गरक किया है। वर्तमान युगबोध से कटी और यथार्थ से छिटकी हुई पत्रकारिता न तो अपने पाठकों को अक्लमंद बनाती है और न ही उन्हें सेहतमंद। पूँजीपतियों के दबाव में संपादकों के अधिकारों पर होते कुठाराघात पर आचार्य शिवपूजन सहाय की चिंता गौरतलब है। वे कहते हैं–"लोग दैनिक पत्रों का साहित्यिक महत्व नहीं समझते, बल्कि वे उन्हें राजनीतिक जागरण का साधन मात्र समझते हैं। किंतु हमारे देश के दैनिक पत्रों ने जहाँ देश को उद्बुद्ध करने का अथक प्रयास किया है, वहीं हिंदी प्रेमी जनता में साहित्यिक चेतना जगाने

का श्रेय भी पाया है। आज प्रत्येक श्रेणी की जनता बड़ी लगन और उत्सुकता से दैनिक पत्रों को पढ़ती है। दैनिक पत्रों की दिनोंदिन बढ़ती हुई लोकप्रियता देश के हित साधन में बहुत सहायक हो रही है। आज हमें हर बात में दैनिक पत्रों की सहायता आवश्यक जान पड़ती है। भाषा और साहित्य की उन्नति में भी दैनिक पत्रों से बहुत सहारा मिल सकता है।''[1]

पत्र-पत्रिकाओं की जवाबदेह भूमिका के लिए संभावित चुनौतियाँ किसकी ओर से हो सकती हैं। यह भान उस समय के दूरदर्शी सम्पादकों को बखूबी हो चुका था। बाबू विष्णुराव पराड़कर ने प्रथम हिंदी सम्पादक सम्मेलन के अध्यक्ष पद से जो कहा था उसकी निर्लज्ज परिणति आज हमारे सामने घटित हो रही है। कठोर सत्य? विष्णु पराड़कर, ''पत्र निकालकर सफलतापूर्वक चलाना बड़े-बड़े धनियों अथवा सुसंगठित कंपनियों के लिए ही संभव होगा। पत्र सर्वांग सुन्दर होंगे। आकार बड़े होंगे। छपाई अच्छी होगी। पत्र मनोहर, मनोरंजक और ज्ञानवर्द्धक चित्रों से सुसज्जित होंगे, लेखों में विविधता होगी, कल्पना होगी, गंभीर गवेषणा की झलक होगी और मनोहारिणी शक्ति भी होगी। ग्राहकों की संख्या लाखों में गिनी जाएगी। यह सब कुछ होगा, पर पत्र प्राणहीन होंगे। पत्रों की नीति देशभक्त, धर्मभक्त अथवा मानवता के उपासक महाप्राण सम्पादकों की नीति न होगी। इन गुणों से सम्पन्न लेखक विकृत मस्तिष्क समझे जाएँगे। सम्पादक की कुर्सी तक उनकी पहुँच भी न होगी।

वास्तव में पत्रकारिता के कुछ निर्धारित मानदण्ड होते हैं, प्रचलित कसौटियाँ जिनका उल्लंघन जनहित के विरुद्ध माना जाता है। इसका सिलसिलेवार उल्लेख किया जाना आवश्यक है। ताकि शिवपूजन सहाय और बाबू विष्णुराव पराड़कर की चिंताओं को समझने में सुविधा हो सके। दरअसल, पत्रकारिता समाज को उचित सूचना, सुझाव और सत्य की सुचिंतित जानकारी देती है। यह समाज में चेतना लाने और जागरूकता फैलाने का काम करती है। संस्कृतिनिष्ठ एवं समाजोन्मुख पत्रकारिता सदैव राजनीतिक, साम्प्रदायिक, छुआछूत, जाति-प्रथा, दलित, स्त्री, आदिवासी आदि मुद्दों के प्रति अपना संवेदनशील व्यवहार दिखाती है तथा इन पर में निष्पक्ष, पारदर्शी एवं वस्तुनिष्ठ बातचीत करती है। यह कृषि, व्यापार, उद्योग, शिक्षा, चिकित्सा से सम्बन्धित नीतियों के प्रति प्रगतिशील दृष्टिकोण रखती है तथा इसका उचित विकास सुनिश्चित करने के लिए सकारात्मक पहल कदमी करती है। पत्रकारिता के दायित्व-बोध में यह भी शामिल है कि वह राष्ट्रीयता-बोध, सामाजिकता और देश के प्रति व्यक्ति के कर्तव्य को समय-समय पर सूचित करती है। यह गलत को गलत ठहराने और सही को सही साबित करने के दिशा में निरन्तर प्रयास करती

है। यह आम जनमानस को अधुनातन परिवर्तन, नवीन आचरणों, खोज, विज्ञान, साहित्य, कला, यात्रा, खेल, नवोन्मेष जैसे बहुविध विषयों की समसामयिक सूचना मुहैया कराती है, उन्हें शिक्षित करती है। जवाबदेह और निष्पक्ष पत्रकारिता गंभीर से गंभीर बात को सहज एवं सरल बनाकर प्रस्तुत करती है, ताकि वह सबकी समझ में आ जाए। यह किसी व्यक्ति-विशेष के लिए नहीं अपितु अपार जनसमूह के प्रहरी के रूप में चौबीसों घंटे काम करती है।

पत्रकारिता आज चाहे जितनी बदल गई है, पर उसके लिए संरचित प्रतिमान और निकष आज भी विचारणीय है। क्योंकि आवारा पूँजी ने पत्रकारीय मूल्यों की किस कदर अनदेखी की है, यह तथ्य अब किसी से छुपा नहीं है। पूर्व की पत्रकारिता में प्रतिबद्धता और जनपक्षधरता किस कोटि की रही है, जानने के लिए हिंदी नवजागरण से बेहतर परिप्रेक्ष्य और कोई दूसरा नहीं हो सकता है। भारतीय जनसमाज की मेधा और प्रतिभा को हिंदी नवजागरण ने माँजा। पश्चिमी आधुनिकीकरण को ठीक-ठीक पहचानने की चेष्टा की। इन्हीं दिनों नवजागरण के पुरस्कर्ता कहे जाने वाले भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने जनभाषाओं के एकीकरण पर बल दिया। उन्होंने राष्ट्रीयता के भूगोल को समझने हेतु मातृभाषाओं के महत्त्व को समझे जाने का आग्रह किया। साथ ही हिंदी की सर्वमान्यता और राष्ट्रीय स्वर बनने की अकूत क्षमता का प्रश्न भी उठाया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने मातृभाषाओं के महत्त्व को समझते हुए जहाँ यह कहा कि–'निज भाषा उन्नति अहै, सब भाषा को मूल/बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल'; वहीं यह भी कहना जरूरी समझा–'हिंदी नई चाल में ढली'। यह नई बनती हिंदी नागरी लिपि में अपनी देह-काया बलिष्ठ और मजबूत बनाने में जुटी थी। भारतेन्दु मंडली के पंडित प्रताप नारायण मिश्र ने हिंदी भाषा के विचार-प्रवाह को गति देने के उद्देश्य से कहा–'हिंदी, हिन्दू, हिन्दुस्तान'। बाद के मनस्वी सम्पादक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिंदी को अधिक रचनात्मक और वैचारिक बनाने में जिस तरह के सम्पादकीय मनीषा का प्रयोग किया, वह आज भी स्वर्ण-लकीर है।

नवजागरण का काल भारत में जनजागृति का अलख जगाने वाला ध्रुवकाल है। इस संक्रांति काल में ब्रिटिश शासन की गुलामगिरी करते सामंतों, जमींदारों, सेठ, साहुकारों, रैयतदारों आदि को सवाल के कठघरे में रखने की कोशिश हुई। यद्यपि ऐसे अभिजन भारतीय परतन्त्रता के हिमायती नहीं थे; लेकिन अंग्रेजों को जाने देना भी नहीं चाहते थे। उन्हें अपना एकाधिपत्य खत्म हो जाने का भय-डर सता रहा था जो उन्हें अंग्रेजों की चारण-भक्ति करने पर विवश किए हुए था। दरअसल,

समाज में जाति-विशेष के वर्चस्व का मिथ टूट रहा था। सामाजिक स्तरीकरण की नधायी भेदभाव आधारित अमानवीय व्यवस्था जबर्दस्त आलोचना का शिकार थी। इसी तरह सामाजिक कुरीतियाँ ही नहीं मानसिक विकृतियाँ भी अपनी पुरानी झोल-झाल हटाने पर विवश थीं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और तत्कालीन साहित्यसेवी स्त्री-पुरुष के बीच बनी पीड़ादायी पितृसत्तात्मक दरो-दिवार और अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था पर तीव्र प्रहार कर रहे थे। उनकी दृष्टि में 'नर-नारि सम हों हि' की अकुंठ भावना निहित थी। उनकी प्रबुद्ध और चेतस मंडली में जो कलमकार थे, उनकी दृष्टि साफ और सुस्पष्ट थीं। उनके वैचारिक लेखों और लिखे गद्य में अपने समय-समाज की वास्तविक समझ और यथार्थवादी दृष्टिकोण दिखलाई पड़ने लगा था। साहित्य में पत्रकारिता का तेवर घुलमिल जाने से कहन की अदायगी और कहे का प्रभाव केन्द्रित होना तय था। भारतीय साहित्य का पुराना कोठार खुल चुका था और उस ज्ञानराशि का सतत् प्रवाह समाचार-पत्र, अनुवाद और अन्यान्य वाचिक-लिखित माध्यमों से चहुँओर अपनी उपस्थिति दर्शाने लगा था। अपनी सीमाओं के बावजूद भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हिंदी नवजागरण के पुरोधा साबित हुए थे और सांस्कृतिक-साहित्यिक पत्रकारिता के आधार स्तंभ भी। उन्होंने अपने युग की जमीनी सचाइयों को पहचानने की कोशिश की। उनकी भारतेन्दु मंडली में सहभागी बने साहित्यकारों ने भी इस समिधा में बहुत कुछ जोड़ा जो स्वाधीनता का राजनीतिक-बोध और सामाजिक चेतना को प्रसूत करने का प्रमुख कारण बना। फलतः अराजक सामाजिक जड़ताओं में जकड़ी मूक-बधिर जनता को साफ जबान में समझदार बात कहने वाले कुछ ऐसे लोग मिल गए, जो पहले के लोगों से भिन्न थे। उनकी कहनशैली हिंदी का नवभाषिक संस्कार ग्रहण किए हुए थी। स्वनामधन्य पत्रकारीय दृष्टि से लैस साहित्यकारों में राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद', राजा रामपाल सिंह, बालकृष्ण भट्ट, बालमुकुन्द गुप्त, बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन', दुर्गा प्रसाद मिश्र, अम्बिका प्रसाद बाजपेयी, गोपाल राम गहमनी, अमृतलाल चक्रवर्ती, रूद्रदत्त शर्मा, बाबू रामकृष्ण वर्मा, राधाचरण गोस्वामी जैसे तपस्वी साधकों का नाम अग्रगण्य है जो भारतेन्दु मंडली के महत्त्वपूर्ण रत्न कहे जा सकते हैं।

आचार्य शिवपूजन सहाय को जिन महानुभावों का वरदहस्त प्राप्त हुआ उनमें नवजागरणकालीन अंतः प्रेरणा और प्रदीप्त-भाव सर्वाधिक है। शिवपूजन सहाय अपने युगबोध की पहचान कर सकें याकि भारतेन्दुकालीन आधुनिक-चेतना से मार्गदर्शन पा सकें, तो इस कारण भी उनकी दृष्टि में भारतेन्दु तद्नुकूल भाव-संवेदना एवं सामूहिकता-बोध के मानवीय-विस्तार (मानव-संचार) पर अधिक बल दे रहे थे।

जनसमूह के प्रति विशेष आग्रही तथा जनपक्षधर रचनाओं के जबर्दस्त पैरोकार होने के कारण हिंदी नवजागरण की नवचेतना विकसित करने में वे और उनकी मण्डली काफी हद तक सफल रही। वर्ण-व्यवस्था के कुंठित अवधारणा को प्रत्यक्ष-परोक्ष ढंग से बचाते हुए भारतेन्दु मण्डली ने कुलजातीय-चेतना को पहली बार राष्ट्रीय-संस्कृति से जोड़ा। औपनिवेषिक साम्राज्य से मुक्ति के ठोस आग्रह के बावजूद भारत की मूल-संवेदना, सरोकार, संस्कार, सामूहिकता, लोकचेतना, जनपक्षधरता, प्रतिबद्धता, त्याग, समर्पण, उत्सर्ग इत्यादि को सम्पूर्णतः शामिल न किया जाना भारतेन्दु मण्डली के हिन्दूवादी प्रवृत्तियों के कारण हुआ जबकि राष्ट्र-गौरव के निर्माण में जुटी भारतेन्दु-मण्डली के सदस्यों की स्पष्ट घोषणा थी–'स्वाधीन मनोवृत्ति तथा अकुंठ चित्तवृत्ति'। अतएव, इसकी प्रतिपूर्ति में नई धारा को हिंदी नवजागरण का ध्वजावाहक बनना पड़ा जिसमें ज्योतिबा फूले एवं रमाबाई फूले का नाम बेहद महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि "इन वर्षों में हिंदी की पत्रकारिता का अनेक स्तरों पर विकास हुआ। राष्ट्रीय चेतना, जागरण, देश प्रेम, समाज सुधार जैसे अनेक स्तरों पर पत्रकारिता समृद्ध हुई जिसमें भाषा के स्तर पर भी समृद्धि लक्षित की जा सकती है। इस दौर के प्रकाशनों में सहज ही देखा जा सकता है कि राजनीतिक प्रश्नाकुलता भी बढ़ी।"[3]

आचार्य शिवपूजन सहाय पत्रकारों, साहित्यकारों तथा सम्पादकों के आलोचकीय दृष्टि के हिमायती थे। उन्होंने नवजागरण की उन प्रवृत्तियों की खुलकर आलोचना की जो सत्तानुरागी या फिर समझौतापरस्त मालूम देती थीं। वजह कि हिंदी नवजागरण के अन्तर्गत हिंदी भाषा-भाषियों ने यूरोपीय शिक्षा से प्रभाव ग्रहण किया था। क्रांति और आन्दोलन के बीज तत्त्व तथा 'स्वतन्त्रता, समानता एवं बंधुत्व' की शब्दावली उन्हीं के यहाँ से मिले थे। लेकिन भारत में उभरी प्रवृत्तियाँ और मानुष चेतना मौलिक थी। यह सच है कि ब्रिटिश पद्धति से मिले ज्ञान ने तर्क-चिंतन-संज्ञान द्वारा वैज्ञानिक-विमर्श की नई परम्परा शुरू कर दी थी जिसे सामान्यतया आधुनिकता का पर्याय मान लिया गया है; परन्तु इसमें भारतीय आत्मा का स्वीकार-अस्वीकार पूर्णतया अपने विवेक-विक्षोभ के साथ समाहित था। अंग्रेजी-शिक्षण से जागरूक तथा शिक्षित बने भारतीयों ने बहुत कुछ सकारात्मक बातें सीखीं जिसमें से पत्र-संस्कृति स्वयं एक है। इसके अलावे हम देख सकते हैं कि, "इतिहास को धर्मो-सम्प्रदायों के अंदरूनी अंतर्विरोधों, परस्पर विरोधी विश्वासों और आर्थिक-सामाजिक स्थितियों के आधार पर होने वाले जातिगत-वर्गगत विभाजन को नकार कर एक 'यूनीफार्म और होमोजिनस' इकाई के रूप में प्रस्तुत करने की व्यवस्थित शुरूआत जेम्स मिल के इतिहास लेखन से हुई।"[4] इस तरह मान्य एवं स्वीकृत प्रचलन को प्रश्नांकित

करने का दमखम भारतेन्दु-मंडली ने दिखाया जिससे वर्तमान आधुनिक बना तो बाद की सदियाँ सुलगते सवाल दागने की आदी हो गईं। राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' ने हिन्दू धर्म में प्रचलित बेसिर पैर की बातों का अपने तर्कों से न सिर्फ खंडन किया बल्कि उन्होंने यह भी कहने का साहस जुटाया कि भारतीयता को लेकर जितनी मुँह उतनी बेमतलब बाते प्रचलित हैं और भारत सम्बन्धी इतिहास-लेखन खुद इससे अछूता नहीं है। कहने को तो यह भी कहा जाता है कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तक शिवप्रसाद की तल्ख टिप्पियों से आहत हो चुके थे। यह और बात है, भारतेन्दु और उनकी मंडली के अन्य सदस्यों में अपनी विचार-दृष्टि और सम्यक् दृष्टिकोण को लेकर आपस में ही भारी असहमति, अन्तर्विरोध, नकार-भाव रहे हैं। जैसे शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द', बालकृष्ण भट्ट, प्रताप नारायण मिश्र, राधाकृष्ण दास, बालमुकुन्द गुप्त, बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' आदि। ये सबलोग पश्चिमी चिंतकों यथा–विलियम जोन्स, कोलब्रुक, जेम्स प्रिंसेप और मैक्समूलर का अविवेकी-प्रस्तावक होने के कारण उनकी निराधार व्याख्याओं से अधिक प्रभावित थे। नतीजतन, बहुविध बुराइयों की चपेट में आकर बिल्कुल किताबी हो चुके हिंदू धर्म का वे तार्किक-विश्लेषण करने की जगह उसके गौरवशाली अतीत को लेकर अधिक मोहग्रस्त दिखाई देते हैं। मनीषी चिंतक श्यामाचरण दूबे किसी भी पूर्वाग्रह अथवा दुराग्रह को नकारते हुए कहते हैं–"भारत की सांस्कृतिक चेतना विशिष्ट प्रबुद्ध वर्ग के पूर्वाग्रह से पीड़ित है, यह धर्मशास्त्रों में चित्रित भारतीय संस्कृति के सार-तत्त्व तथा प्रधान विषयवस्तु को उभारते हैं। इस प्रकार से कुछ भी प्रदर्शित किया जाता है, वह बहुत अंशों में भारतीय संस्कृति का पुस्तकीय दृष्टिकोण होता है। यह वह आदर्श संस्कृति है जिसको नगरीय पढ़े-लिखे लोग कल्पना करते हैं, वह जनता की यथार्थ संस्कृति नहीं है।"[5] डी. डी. कोशांबी ने आत्म मोह ग्रस्तता से निकलने की सलाह देते हुए उचित ही कहा है कि–'अगर कहीं कोई स्वर्णकाल जैसी चीज है, तो वह अतीत में नहीं बल्कि भविष्य में मौजूद है।' भविष्य में असीम संभावनाएँ छिपी हैं। प्रो. अमरनाथ हिंदी भाषा के संदर्भ में यह बात पूरे दमखम से कहते हैं कि–"तमाम प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद हिंदी ने अपना दायरा विस्तृत किया है। अपनी क्षमता में इजाफा किया है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की शिक्षा के लिए माध्यम भाषा के रूप में अपनी योग्यता प्रमाणित की है। निःसंदेह इस देश का भविष्य हिंदी के साथ जुड़ा है क्योंकि हिंदी, देश के उन मेहनतकशों की भाषा है, आने वाला भविष्य जिनकी मुट्ठी में होगा।"[6]

इस प्रकार हिंदी नवजागरण ने वैचारिक बहस छेड़ने और प्रश्न उठाने की जो परिपाटी शुरू की, वह बेमिसाल साबित हुई। दायित्व-बोध से भरी-पूरी यह परम्परा

समालोचना भी वही करते थे। संपादकीय, चलती चक्की व अन्य विनोदपूर्ण टिप्पणियाँ लिखने तथा प्रूफ पढ़ने का जिम्मा शिवपूजन सहाय का था। मुंशी नवजादिक लाल भी हास्य विनोदपूर्ण टिप्पणियाँ लिखते थे।''[9] मतवाला-मंडल की चर्चा हो, तो आचार्य शिवपूजन सहाय की स्मृति स्वमेव अपने साथ जुड़ जाती है। लोक-प्रचलित कहावत है--'सबै सहायक सबल के, निर्बल ना केऊ सहाय' की रूढ़-धारणा को तोड़ने में शिवपूजन सहाय और उनकी मतवाला-मंडली की पत्रकारीय निष्ठा, जुनून और दूर दृष्टि द्रष्टव्य है। शिवपूजन जी की यह मंडली अपने अतिरिक्त जिन-जिन मतवालों से मिलकर बनी थी उनके नाम हैं--मुंशी नवजादिक लाल श्रीवास्तव, श्री ईश्वरी प्रसाद शर्मा, श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'। उन दिनों की साहित्यिक पत्रों में इसकी धाक पूरी तरह जम चुकी थी। यही नहीं कई कारणों से मतवाला-मंडली लोकप्रिय थी। यूँ तो मतवाला कलकत्ता के बालकृष्ण प्रेस से निकलती थी, लेकिन उसके मालिक एवं संचालक श्री महादेव प्रसाद सेठ मिर्जापुर निवासी थे। सेठ जी का मतवाला के लिए फरमान था कि चाहे कोई कितना भी बड़ा हो, जरा भी लचे तो धरकर रगड़ डालो। उन दिनों 'मतवाला' की 10 हजार प्रतियाँ छपती थीं। उसके लिए कागज, स्याही, ब्लॉक तथा बिक्री आदि की सारी देखभाल मतवाला-मंडली ही संभालती थी। किन्तु मुंशी नवजादिक लाल इसमें विशेष निपुण थे। अपने हिसाब रखने की इस प्रवृत्ति के कारण ही उन्हें 'मुंशी' कहा जाता था। मुंशी साहब महादेव प्रसाद सेठ के सबसे निकट थे। इन्हीं के आश्वासन पर ही सेठ जी ने 'मतवाला' निकाला था। मतवाला-मंडल के सदस्य रूप में शामिल नवजादिक लाल लेखक भी जबर्दस्त थे। मतवाला में 'मतवाला की बहक' नामक जो स्तंभ निकलता था, उसे वे ही लिखा करते थे। मुंशी जी एक सफल पत्रकार होने के भी कई उदाहरण हैं। मुंशी जी ने 'लाला लाजपतराय' की ओजपूर्ण जीवनी लिखी थी। अन्य पुस्तकों में 'शान्ति-निकेतन', 'बेगमों के आँसू' और 'पराधीनों की विजय-यात्रा' नामक उपन्यास भी लिखे थे। मतवाला मंडली के श्री ईश्वरी प्रसाद शर्मा की शोहरत भी बेजोड़ थी। एक बार वह अपने पत्रकारीय लेखन की वजह से जेल गए और जल्द ही ससम्मान बरी हुए। इस पर उस समय के मशहूर कवि बिस्मिल ने लिखा--'ईश्वरी प्रसाद शर्मा छूट गए। ख़त में यह पढ़कर दिल हुआ बाग-बाग/लिख दिया 'बिस्मिल' ने बर्मन जी को 'अब जलाओ घर में, तुम घी के चिराग'। श्री ईश्वरी प्रसाद शर्मा अपने साप्ताहिक पत्र 'हिन्दू पंच' की वजह से भी जाने जाते हैं। इस पत्र का मुख्य उद्देश्य हिन्दू संगठन, शुद्ध संस्कार, अछूतोद्धार, समाज-सुधार और हिंदी-प्रचार था। ईश्वरी प्रसाद जी द्वारा मराठी से अनूदित 'इन्दुमति'

तथा 'रत्नदीप' नामक उपन्यास भी अपनी विशिष्टता के लिए विख्यात है। अंग्रेजी से अनूदित उपन्यासों में 'प्रेम गंगा' और 'प्रेमिका' नामक उपन्यास उल्लेख्य है।

मतवाला-मंडली के बतौर सदस्य सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' की तो बात ही निराली है। निराला बालकृष्ण प्रेस के ऊपरी तल्ले में रामकृष्ण मिशन के सन्यासियों के साथ रहते थे। एक नवोदित उर्जस्वित कवि के रूप में वह भी मतवाला से जुड़ गए। सेठ जी का निराला पर बहुत स्नेह था, यहाँ तक कि उनके लिए केश-रंजन और जावा कुसुम तेल लाकर रखते थे। निराला जब बाहर घूमने निकलते वह उनके जेब में रूपये-पैसे डाल देते थे। जेल जाने के लिए वे हमेशा तैयार रहते थे। मतवाला-मंडली में एक और शीर्षस्थ व्यक्ति रहे—पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'। उग्र जी ने 'मतवाला-मण्डल' के एक सदस्य की हैसियत से अपने साहित्यिक जीवन में प्रतिष्ठा प्राप्त करके हिंदी कथा साहित्य को जहाँ एक विशिष्ट भाव-भंगिमा प्रदान की, वहाँ उत्कृष्ट पत्रकार के रूप में भी उनकी देन कम महत्त्व नहीं रखती। 'मतवाला' में उनके लिखे चुटीले व्यंग्य जबर्दस्त लोकप्रिय थे। 'मतवाला' में कार्य करते हुए उग्र जी ने अपने को इतना माँजा और कहन को नुकदार बनाया कि इनकी व्यंग्य-लेखन प्रतिभा अत्यन्त प्रखर हो गई थी। क्षेमचन्द्र 'सुमन' श्री बेचन शर्मा 'उग्र' के बारे में ठोस किन्तु महीन टिप्पणी करते हैं—'आज कितने ऐसे पत्रकार हैं, जो मालिक को ठेंगे पर रखकर अपनी बात कहने की क्षमता रखते हों।' उन्होंने खुद ही पत्रकारिता के निकष सामने रखे—''मेरी राय में पत्रकार बनने से पूर्व आदमी को समझ लेना चाहिए कि यह मार्ग 'त्याग' का है 'संग्रह' का नहीं। जिस भाई या बहन को भोग-विलास की लालसा हो, वह और धन्धे करे, रहम करे इस राम-रोजगार पर। मेरा आदर्श पत्रकार ईमानदार पादरी, पीर, परमहंस-सा नजर आता है। व्यक्तिगत सुख-दुःख के बहुत ऊपर, किसी भी भीड़ में जिसे आसानी से पहचाना जा सके।''

मतवाला-मंडली के सान्निध्य में संघर्ष का सहयात्री बने आचार्य शिवपूजन सहाय का कर्म एवं व्यक्तित्व दोनों आदर्श है। डॉ. सिद्धिलाल माणिक ने उनके बारे में उपयुक्त ही कहा है कि—''उन्होंने एक पत्र-सम्पादक के रूप में जिस उत्साह से हिंदी-सेवा का व्रत लिया था, उसी उत्साह और दृढ़ता से उसे निभाया भी। हिंदी प्रेम उनकी धमनियों में लहू की तरह प्रभावित होता रहता था। वे आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी जैसे सम्पादकाचार्य की परम्परा में अग्रणी कड़ी के रूप में हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में आए थे और द्विवेदी जी के आदर्शों के अनुरूप ही अपने को ढालकर उन्होंने पूरी निष्ठा और दायित्व-चेतना के साथ समर्पित और स्तरीय सम्पादन-कार्य का एक प्रतिमान खड़ा कर दिया। अपने जीवन-काल में ही एक मर्मी कलाकार

होने के साथ-साथ एक विज्ञ समीक्षक के रूप में भी प्रतिष्ठित हो गए। शीघ्र ही हिंदी-जगत् ने सिर झुकाकर उनकी सम्पादन-क्षमता और अद्वितीय कला का लोहा मान लिया था।"[10] मतवाला-मंडली में कई जन शामिल थे किन्तु सभी एक से बढ़कर एक धुरन्धर थे। अतएव, सबका समान महत्त्व बनता है। आज यह परिपाटी खत्म होती जा रही है। अधिसंख्य पत्र-पत्रिकाओं में सम्पादक अथवा प्रधान सम्पादक का ही बखान होता है, जबकि सचाई कुछ और है। पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी के शब्दों में कहें तो–'पत्रकार पेशे की यह एक विडम्बना है कि मुख्य काम करने वाले तो उसके सहायक सम्पादक होते हैं और सम्पूर्ण यश मिल जाता है उसके प्रधान सम्पादक को।'

यहाँ यह कहना आवश्यक जान पड़ता है कि चरित्र से साधु किन्तु पत्रकारिता शैली में प्रखर शिवपूजन सहाय व्यक्तिगत नाम-यश के आकांक्षी कभी नहीं रहे। तभी तो उनकी पत्रकारीय-निष्ठा का अभिनन्दन करते हुए हरिवंश राय बच्चन ने कहा है–'हिंदी की शक्ति और क्षमता का, देना तुम्हें प्रणाम।' बड़े ही श्रद्धा एवं आत्मीय-भाव से संस्कृति-चिंतक फादर कामिल बुल्के ने लिखा है कि–'परलोक में जाकर जिससे मिलकर उन्हें अनिर्वचनीय खुशी होगी वह शिवपूजन सहाय हैं।' आचार्य शिवपूजन सहाय के कृतित्व एवं व्यक्तित्व के साक्षी एवं द्रष्टा रहे उनके सुपुत्र मंगलमूर्ति ने अपने पिता को याद करते हुए लिखा है–"हिंदी में अभिनन्दन ग्रन्थ निकालने की परम्परा हिंदी में सहाय जी ने ही शुरू की। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी अभिनन्दन ग्रन्थ के मूल में सहाय जी की ही प्रेरणा रही है और उसका एक तरह से संपादन भी उन्होंने ही किया।"[11] वह यहीं पर आचार्य नन्ददुलारे वाजपेई के हवाले से कहते हैं–"ऐसा अभिनंदन ग्रन्थ हिंदी में कोई दूसरा नहीं है। वैसे तो उनके गुरु ईश्वरी प्रसाद शर्मा थे लेकिन अपना आराध्य गुरु वे आचार्य द्विवेदी को मानते थे। वे द्विवेदी के ही पद चिन्हों पर आगे बढ़े। उनका गद्य 'ठेठ हिंदी का ठाठ' की परम्परा में है। शुरू में वह बहुत आलंकारिक भाषा लिखते थे बाद में ठेठ हिंदी की परम्परा में आए, फिर हिंदी-उर्दू की ओर गए। बिहार राष्ट्र भाषा का संचालन किया जो उस समय बहुत ही महत्पूर्ण संस्था बन गई थी। उनके समय में जो किताबें वहाँ से प्रकाशित हुई वे आपने आप में मानक हैं। उनके निर्देशन में वासुदेवशरण अग्रवाल का 'हर्ष-चरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन', 'कादम्बरी : एक सांस्कृतिक अध्ययन', महापंडित राहुल सांकृत्यायन का 'सरहपा कोश' जैसे ग्रंथों को तैयार करा कर प्रकाशित किया।"[12]

ऐसे महती और पुनीत कार्य की आवश्यकता आज की पीढ़ी को नवऊर्जा

एवं नवशक्ति देने हेतु अत्यावश्यक है। पत्रकारीय पेशे से जुड़े लोगों को सुबुद्ध पत्रकार ऋषिकेश राय के इस आग्रह पर विचारना चाहिए जिसमें उन्होंने कहा है कि–"जन-संघर्षों से प्रेरणा लेकर ही हिंदी का धारदार एवं उर्जस्वित स्वरूप विकसित हो सकता है। इन आर्थिक परिवर्तनों की नकारात्मक भूमिकाओं के खिलाफ मोर्चा खड़ाकर हिंदी जन-संस्कृति के बुनियादी मूल्यों की अभिव्यक्ति तथा संरक्षण का माध्यम बन सकती है।"[13]

संदर्भ सूची

1. http:èèbharatdiscovery.org
2. साहित्यिक पत्रकारिता, ज्योतिष जोशी प . 21
3. साहित्यिक पत्रकारिता, ज्योतिष जोशी, पृ. 17
4. इतिहास और राष्ट्रवाद, वैभव सिंह, पृ. 59
5. इतिहास और राष्ट्रवाद, वैभव सिंह, पृ. 135
6. सदी के अन्त में हिंदी, सम्पादक–कुसुम चतुर्वेदी एवं डॉ. अमरनाथ, पृ. 7
7. साहित्यिक पत्रकारिता, ज्योतिष जोशी, पृ. 38
8. सदी के अन्त में हिंदी, सम्पादक–कुसुम चतुर्वेदी एवं डॉ. अमरनाथ, पृ. 21
9. hindisamay.com
10. हिंदी के यशस्वी पत्रकार, क्षेमचन्द्र 'सुमन', पृ. 229
11. Samalochan.blogspot.in
12. Samalochan.blogspot.in
13. सदी के अन्त में हिंदी, (सम्पादकद्वय) कुसुम चतुर्वेदी एवं डॉ. अमरनाथ, पृ. 81